पाठ 18

ऋकारान्त संज्ञाओं के रूप; भाववाच्य; कृत प्रत्यय- तव्य, अनीय, य; एक संवाद, कथा– 'भर्तृहरेः वैराग्यम्'

18.1 सं. ऋकारान्त संज्ञाएँ : स्वरान्त संज्ञाओं का अंतिम प्रमुख वर्ग ऋकारान्त संज्ञाओं का है। ये संज्ञाएँ दो प्रकार की हैं: इनमें से कुछ संबंधसूचक है, जैसे, **पितृ** (पिता), **भ्रातृ** (भाई) और कुछ से कर्ता द्वारा किए जाने वाले कार्य का बोध होता है, जैसे, **नेतृ** (नेता, नेतृत्व करनेवाला)। नीचे **पितृ** और **नेतृ** संज्ञाओं के रूप दिए गए हैं:

	पितृ			**नेतृ**		
	एकव.	द्विव.	बहुव.	एकव.	द्विव.	बहुव.
प्रथमा	**पिता**	**पितरौ**	**पितरः**	**नेता**	**नेतारौ**	**नेतारः**
द्वितीया	**पितरम्**	**पितरौ**	**पितॄन्**	**नेतारम्**	**नेतारौ**	**नेतॄन्**
तृतीया	**पित्रा**	**पितृभ्याम्**	**पितृभिः**	**नेत्रा**	**नेतृभ्याम्**	**नेतृभिः**
चतुर्थी	**पित्रे**	"	**पितृभ्यः**	**नेत्रे**	"	**नेतृभ्यः**
पंचमी	**पितुः**	"	"	**नेतुः**	"	"
षष्ठी	"	**पित्रोः**	**पितॄणाम्**	"	**नेत्रोः**	**नेतॄणाम्**
सप्तमी	**पितरि**	"	**पितृषु**	**नेतरि**	"	**नेतृषु**

इन संज्ञाओं के संबोधन-एकवचन के रूप क्रमशः **पितः** और **नेतः** हैं।

ध्यान दें कि इन दोनों प्रकार की **ऋकारान्त** संज्ञाओं के रूपों में अन्तर केवल प्रथमा के द्विवचन और बहुवचन में तथा द्वितीया के एकवचन और द्विवचन में है। (इन रूपों को मोटे अक्षरों में दिखाया गया है।)

भर्तृ (पति/स्वामी) यद्यपि संबंधसूचक संज्ञा है परन्तु इसके रूप नेतृ की तरह चलते हैं। अधिकांश **ऋकारान्त स्त्रीलिंग** संज्ञाएँ संबंधसूचक हैं। इनके रूप द्वितीया के बहुवचन को छोड़कर सभी विभक्तियों में **पितृ** के समान चलते हैं। द्वितीया का बहुवचन रूप ॠकारान्त होता है। परन्तु **स्वसृ** (बहिन) के रूप द्वितीया के बहुवचन को छोड़कर **नेतृ** की तरह चलते हैं। **मातृ** और **स्वसृ** के प्रथमा और द्वितीया के रूप नीचे दिए गए हैं:

	मातृ			**स्वसृ**		
	एकव.	द्विव.	बहुव.	एकव.	द्विव.	बहुव.
कर्ता.	**माता**	**मातरौ**	**मातरः**	**स्वसा**	**स्वसारौ**	**स्वसारः**
कर्म.	**मातरम्**	"	**मातॄः**	**स्वसारम्**	"	**स्वसॄः**

टिप्पणी: सामान्य रूप से स्वरान्त स्त्रीलिंग संज्ञाओं के द्वितीया के बहुवचन का रूप यदि अंतिम स्वर दीर्घ न हो तो उसे दीर्घ करके बनाया जाता है और उसके साथ विसर्ग जोड़ दिया जाता है जैसे:- **बालिका:, नदी:, मती:, धेनू:, वधू:, मातृ:** आदि।

18.2 अ. नीचे दिए वाक्यों को पढ़िए और उनका हिन्दी में अनुवाद कीजिए:

क. 1. अद्य मम पिता मम मात्रा सह ग्रामात् नगरम् अगच्छत। 2. पितु: कार्यालय:[1] नगरे अस्ति। 3. स: कार्यालये स्वकार्यम् अकरोत्। 4. मम मातु: बहूनि मित्राणि नगरे वसन्ति। 5. माता स्वमित्राणां गृहाणि गत्वा तान् अमिलत्। 6. सायं मम पितरौ[2] गृहं प्रत्यागच्छताम्[3]। 7. तौ मह्यं त्रीणि पुस्तकानि मम स्वस्त्रे च तिस्र: माला: आनयताम्। 8. स्वसु: माला: रक्ता:[4] आसन्। 9. सा माला: गृहीत्वा[5] अति प्रसन्ना अभवत्।

ख. 1. ते अस्माकं देशस्य नेतार: सन्ति। 2. देशस्य भविष्यं नेतृणां हस्ते भवति। 3. यदि नेतार: योग्या:, सत्या: साधव: च भवेयु: तर्हि देश: उन्नतिं लभते। 4. यदि नेतार: शठा: स्यु: तर्हि देश: अवनतिं [6] गच्छति। 5. ह्य: अहमेतेषां नेतृणां सभाम् अगच्छम्। 6. बहव: नेतार: तत्र भाषणम् अकुर्वन्। 7. सभायां श्रोतार:[7] तु बहव: न आसन् किन्तु नेतृणाम् उत्साह: अत्यधिक: आसीत्। 8. 'अस्माकं दलं निर्वाचने[8] जेष्यति' इति सर्वे वक्तार:[9] अकथयन्। 9. श्रोतृणां मतं[10] वक्तृणां मताद् भिन्नम् आसीत्।

(शब्दार्थ:—1. दफ्तर, 2. माता-पिता, 3. लौट आए, 4. लाल, 5. लेकर, 6. पतन, 7. श्रोता, सुनने वाले, 8. चुनाव में, 9. भाषण देने वाले, 10. राय)

टिप्पणी: द्विवचन संज्ञा **पितरौ** का प्रयोग माता-पिता दोनों के लिए होता है।

18.3 क्रि. भाववाच्य: हमने पिछले पाठ में पढ़ा था कि कर्मवाच्य में सकर्मक क्रियाओं का प्रयोग होता है संस्कृत में कर्मवाच्य की संरचना से मिलती-जुलती ही भाववाच्य की संरचना है जिसका प्रयोग अकर्मक क्रिया के साथ होता है। इसे बनाने के नियम कर्मवाच्य के समान ही हैं, इसलिए रूप-रचना की दृष्टि से कर्मवाच्य और भाववाच्य में कोई अंतर नहीं है। भाववाच्य में क्रिया का प्रयोग केवल अन्य पुरुष एकवचन में होता है। कर्मवाच्य की तरह भाववाच्य में भी कर्तृवाच्य का कर्ता तृतीया विभक्ति में रहता है।

जीव् अकर्मक धातु है, इसलिए इसका कर्मवाच्य में प्रयोग नहीं हो सकता; परन्तु संस्कृत में हम कह सकते हैं:- **अस्मिन् संसारे धनं विना न जीव्यते**—इस संसार में धन के बिना नहीं जिया जा सकता। भाववाच्य के कुछ और उदाहरण नीचे दिए गए हैं:

बुधै: अत्र न हस्यते।	यहाँ बुद्धिमान लोग नहीं हँसते।
इत्थं जनै: चिन्त्यते।	लोग ऐसा सोचते हैं।
मूर्खै: कुत्रापि न नम्यते।	मूर्ख लोग कहीं भी नहीं झुकते।
त्वया किमर्थं कुप्यते?	तुम क्यों गुस्सा होते हो।
अस्माभि: अधिकं न चल्यते।	हम और अधिक नहीं चला जाता।

18.4 क्रि. कृत् प्रत्यय— तव्य, अनीय और **य**। जब किसी व्यक्ति से किसी काम की अपेक्षा या आशा की जाती है तो इस भाव को कर्तृवाच्य में विधिलिङ् या लोट् लकार के द्वारा प्रकट किया जाता है। वांछनीयता का यह भाव कर्मवाच्य या भाववाच्य में धातु के साथ **तव्य, अनीय** और **य** प्रत्ययों के प्रयोग से प्रकट किया जाता है। जिस व्यक्ति से उस कार्य की अपेक्षा होती है उसे तृतीया विभक्ति में रखा जाता है। **सेट्** धातुओं में **तव्य** से पहले **इ** जुड़ता है। **तव्य** और **अनीय** से पहले धातु के अन्तिम स्वर और मध्यवर्ती ह्रस्व स्वर को गुण हो जाता है, जैसे- **जि-जेतव्य, भू-भवितव्य, कृ-कर्तव्य, करणीय।** पाठ 3.3 में दिए संधि के एक नियम के अनुसार यदि **अनीय** से पहले **ऋ, र्, ष्** में से कोई अक्षर हो तो **अनीय** के **न्** को **ण्** हो जाता है, जैसेः- **कृ-करणीय। य** से पूर्व अन्तिम **इ** और **ई** को गुण तथा **उ, ऊ ऋ, ॠ** को वृद्धि हो जाती है, जैसेः- **जि-जेय**, **नी-नेय**, **भू-भाव्य**, **कृ-कार्य।** सामान्यतः मध्यवर्ती **इ** और **उ** को गुण होता है, जैसे, **भिद्-भेद्य, युज्-योज्य**, किन्तु **दृश्-दृश्य** में गुण नहीं होता।

सकर्मक क्रियाओं से बननेवाले कर्मवाच्य कृदंतों के रूप विशेषणों की तरह चलते हैं और उनकी अन्विति क्रिया के कर्म के लिंग और वचन के अनुसार होती है। जो प्रथमा विभक्ति में रहता है; जैसेः

त्वया इदं पुस्तकं पठनीयम्/पठितव्यम्-तुम्हें यह पुस्तक पढ़नी चाहिए।
तेन फलानि खादितव्यानि- उसे फल खाने चाहिए।

यदि क्रिया अकर्मक हो तो इनसे बने कृदन्तों का प्रयोग हमेशा नपुंसकलिंग की प्रथमा विभक्ति के एकवचन में ही होता है, जैसेः

अस्माभिः परस्परं मन्त्रयितव्यम्- हमें आपस में सलाह करनी चाहिए।
त्वया अत्र कोलाहल' न कर्तव्यः- तुम्हें यहाँ शोर नही मचाना चाहिए।

कृत् प्रत्ययों के कुछ और उदाहरण नीचे दिए हैंः

त्वया इदं मन्दिरं द्रष्टव्यम्।	तुम्हें यह मंदिर देखना चाहिए।
इमे पाठाः पठितव्याः।	ये पाठ पढ़े जाने चाहिए।
तेन मम पत्राणि न पठितव्यानि।	उसे मेरे पत्र नहीं पढ़ने चाहिए।
इदं पुस्तकं तस्मै देयम्।	यह पुस्तक उसे दी जानी चाहिए।
अस्माभिः तत्र न गन्तव्यम्।	हमें वहाँ नहीं जाना चाहिए।
जलमिदं न पातव्यम्/पानीयम्।	यह पानी नहीं पिया जाना चाहिए।/ यह पानी पीने योग्य नहीं है।
इदं युध्दं अवश्यं जेतव्यम्।	यह युद्ध अवश्य जीता जाना चाहिए।
अत्र न स्वप्तव्यम्।	यहाँ नहीं सोना चाहिए।
गुरवः आदरणीयाः।	गुरुओं का आदर किया जाना चाहिए।

इन कृदन्तों का प्रयोग विशेषण के रूप में भी होता है, जैसेः-

दर्शनीयं स्थानम्- देखने लायक स्थान, **कर्तव्यं कर्म**- कर्म करने योग्य काम।

18.5 अ. नीचे दिए संवाद को पढ़िए और इनका हिन्दी में अनुवाद कीजिएः

रामः- अद्य सः अतीव प्रसन्नः दृश्यते। अवश्यमेव केनापि कारणेन भवितव्यम्।

श्यामः- तस्य प्रसन्नतायाः कारणं मया सम्यक्[1] ज्ञायते[2]। सः विश्वविद्यालयस्य परीक्षायां प्रथमे स्थाने आगच्छत्।

रामः- तर्हि आवाभ्यां सः अभिनन्दनीयः[3]। आगम्यताम्, तस्य सकाशं [4] गच्छावः।

श्यामः- किन्तु अहं गन्तुं नेच्छामि।

रामः- नैतत् उचितम्[5]। स्वमित्रस्य सफलतया त्वया प्रसन्नेन भवितव्यम्।

श्यामः- सः मम मित्रमस्ति, किन्तु न तस्य सफलता मम प्रसन्नतायाः कारणम्।

रामः- कथं त्वं प्रसन्नो नासि स्वमित्रस्य सफलतया?

श्यामः- अहं स्वयं[6] तस्यां परीक्षायां प्रथमं स्थानं प्राप्तुम् ऐच्छम्[7]। तस्य सफलता मम असफलतायाः कारणम्। अतोऽहं भृशं[8] दुःखितोऽस्मि।

रामः- नैतद् उचितम्। अन्येषां सफलतायां स्वकीया एव सफलता मन्तव्या। विशेषेण[9] मित्रस्य सफलतायां सदैव प्रसन्नता अनुभवनीया। अन्यथा[10], मित्रे च शत्रौ च को भेदो भवेत्।

(**शब्दार्थः**- 1. भली-भाँति, अच्छी तरह; 2. मालूम है, जानता हूँ; 3. शुभकामना दी जानी चाहिए; 4. पास; 5. ठीक, अच्छी बात; 6. खुद, आप भी; 7. चाहता था -इच्छामि का भूतकाल; 8. अत्यधिक; 9. विशेषरूप से; 10. नहीं तो)

18.6 प. आइए, अब एक रोचक कहानी पढ़े।

भर्तृहरेः वैराग्यम्

भारते भर्तृहरिः नाम एकः अति प्रसिद्धः[1] राजा अभवत्। सः राजकार्ये[2] अति कुशलः[3], दयालुः परोपकारी आसीत्। सः अति विद्वान् तथा च[4] कुशलः कविः आसीत्। सः बहून् श्लोकान् अलिखत्। ते श्लोकाः लोके अति प्रसिध्दाः सन्ति। चतुर्थे पाठे "यूयं वयं वयं यूयम्. . ." इति श्लोकं यूयम् अपठत। सः श्लोकोऽपि भर्तृहरेः एव अस्ति। भर्तृहरेः विषये एका कथा जनैः कथ्यते।

एकदा एको मुनिः भर्तृहरये एकम् अमृतफलम् अयच्छत्। 'यः कोऽपि एतत् अमृतफलं भक्षयेत् सः अति दीर्घजीवी[5] भविष्यति' इति मुनिः भर्तृहरिम् अकथयत्। राजा भर्तृहरिः स्वस्यां जायायाम् अतीव अस्निह्यत्। तस्याः जीवनं दीर्घं भवेत् इति चिन्तयित्वा सः तत् फलं तस्यै अयच्छत्। किन्तु तस्य पत्नी नगरस्य एकस्मिन् राजपुरुषे[6] स्निह्यति स्म। सा तत् फलं तस्मै राजपुरुषाय अयच्छत्। तस्य राजपुरुषस्य अपि प्रीतिः अन्यस्यां कस्यांचित्[7] स्त्रियाम् आसीत्। सः तत् फलं स्वप्रियायै[8] अयच्छत। तस्य प्रियायाः प्रीतिः भर्तृहरौ आसीत्। सा तत् अमृतफलं पुनः भर्तृहरेः सकाशम् आनयत् अवदत् च-यदि भवान् इदं फलं खादेत् तर्हि दीर्घजीवी भवेत्। अहं भवतः दीर्घजीवनम् इच्छामि। कृपया फलमिदं भवान् खादतु।

(**शब्दार्थः**—1. मशहूर, 2. प्रशासन के काम, 3. चतुर, 4. **तथा च**- और, इसके साथ ही; 5. लम्बी आयु वाला; 6. **राजपुरुषः**- सरकारी अधिकारी; 7. किसी और; 8. अपनी प्रियतमा को)

स्वजायायै स्नेहेन उपहृतं[1] तत् फलं स्वस्मै अन्यया स्त्रिया आनीतं[2] दृष्ट्वा[3] राजा भर्तृहरिः उच्चैः[4] अहसत्, इमं श्लोकं च अपठत्-

यां चिन्तयामि सततं[5] मयि सा विरक्ता[6]।
साप्यन्यमिच्छति[7] जनं स जनोऽन्यसक्तः[8]॥
अस्मत्कृते[9] च परितुष्यति[10] काचिदन्या[11]।
धिक्[12] तां च तं च मदनं[13] च इमां च मां च॥

भर्तृहरेः हृदये महत् वैराग्यम् अजायत। सः राज्यं त्यक्त्वा वनम् अगच्छत् तदनन्तरं[14] च तत्रैव अवसत्। सः वैराग्यविषये शतं श्लोकान् अरचयत्[15]। तेषां सङ्ग्रहः "वैराग्यशतकम्" इति काव्ये वर्तते।

(**शब्दार्थ**:—1. उपहार में दिए हुए (उप+हृ+त), 2. लाया गया, 3. देखकर, 4. जोर से, 5. लगातार, हमेशा, 6. (मेरे प्रति) स्नेहरहित है; 7. **सा अपि अन्यम् इच्छति**- वह भी किसी दूसरे को चाहती है; 8. **सः जनः अन्यसक्तः**:- वह व्यक्ति किसी और से प्रेम करता है; 9. **कृते**- के लिए; **अस्मत्कृते**- हमारे लिए; 10. प्रसन्न या संतुष्ट होता है; 11. कोई और; 12. धिक्कार है; 13. **मदनः**:- कामदेव; 14. उसके बाद; 15. रचना की)

18.7 अ. तव्य, अनीय, य कृत् प्रत्ययों का प्रयोग करते हुए निम्नलिखित वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कीजिए।

1. हमें आज उस बाग को देखना चाहिए। 2. तुम्हें ये सारी पुस्तकें पढ़नी चाहिए। 3. उसे सुबह दूध पीना चाहिए। 4. मुझे इस लड़के के साथ शहर जाना चाहिए। 5. उसे वह चित्र अपने मित्र को देना चाहिए। 6. तुम्हें सभा में सोना नहीं चाहिए। 7. अब हमें आसन करने चाहिए। 8. विद्यार्थियों को कक्षा में शोर नहीं मचाना चाहिए।

अभ्यासों के उत्तर

18.2 क. 1. आज मेरे पिताजी मेरी माता जी के साथ गाँव से शहर गए। 2. पिताजी का कार्यालय शहर में है। 3. उन्होंने कार्यालय में अपना काम किया। 4. मेरी माताजी की बहुत-सी सहेलिया; (मित्र) शहर में रहती हैं। 5. माता जी अपनी सहेलियों के घर जाकर उनसे मिलीं। 6. शाम को मेरे माता-पिता घर लौट आए। 7. वे मेरे लिए तीन पुस्तकें और मेरी बहिन के लिए तीन मालाएँ लाए। 8. बहिन की मालाएँ लाल थीं। 9. वह मालाएँ पाकर बहुत प्रसन्न हुई।

ख. 1. वे हमारे देश के नेता हैं। 2. देश का भविष्य नेताओं के हाथ में होता है। 3. यदि नेता योग्य, सच्चे और अच्छे स्वभाव वाले हों तो देश उन्नति करता है। 4. यदि नेता धूर्त हों तो देश की अवनति होती है। 5. कल मैं इन नेताओं की सभा में गया था। 6. वहाँ बहुत से नेताओं ने भाषण दिए। 7. सभा में श्रोता तो बहुत अधिक नहीं थे परन्तु नेताओं में बहुत अधिक उत्साह था। 8. 'चुनाव में हमारा दल जीतेगा' ऐसा सभी वक्ता कह रहे थे। 9. श्रोताओं की राय वक्ताओं की राय से भिन्न थी।

18.5 **राम**—आज वह बहुत प्रसन्न दिखाई दे रहा है। अवश्य ही कुछ न कुछ कारण होना चाहिए। **श्याम**—उसकी प्रसन्नता का कारण अच्छी तरह मालूम है। विश्वविद्यालय की परीक्षा में

वह पहले स्थान पर आया है। **राम**—तब तो हमें (दोनों को) उसे शुभकामना देनी चाहिए। आओ, उसके पास चलें। **श्याम**—परन्तु मैं जाना नहीं चाहता। **राम**—यह अच्छी बात नहीं है। अपने मित्र की सफलता पर तुम्हें प्रसन्न होना चाहिए। **श्याम**—वह मेरा मित्र है, परन्तु उसकी सफलता से मुझे प्रसन्नता नहीं है। **राम**—अपने मित्र की सफलता से तुम प्रसन्न क्यों नहीं हो? **श्याम**—मैं स्वयं उस परीक्षा में पहला स्थान पाना चाहता था। उसकी सफलता मेरी असफलता का कारण है। इसलिए मैं बहुत अधिक दुःखी हूँ। **राम**—यह ठीक नहीं है। दूसरों की सफलता में अपनी ही सफलता समझनी चाहिए। विशेष रूप से मित्र की सफलता से तो हमें हमेशा प्रसन्नता होनी चाहिए। नहीं तो, मित्र और शत्रु में क्या अन्तर होगा?

18.6 भारत में भर्तृहरि नाम का एक प्रसिद्ध राजा हुआ था। वह राज कार्य में बहुत चतुर, दयावान् और परोपकारी था। वह बहुत विद्वान और अच्छा कवि था। उसने बहुत से श्लोक लिखे। वे श्लोक लोक में बहुत प्रसिद्ध हैं। चौथे पाठ में "यूयं वयं वयं यूयम् ◌ं ◌ं ◌ं ◌ं " आपने यह श्लोक पढ़ा था। वह श्लोक भी भर्तृहरि का ही है। भर्तृहरि के बारे में एक कहानी लोग सुनाते हैं।

एक बार किसी मुनि ने भर्तृहरि को एक अमृतफल दिया। जो कोई भी इस अमृत फल को खाए वह बड़ी आयु वाला हो जाएगा ऐसा मुनि ने भर्तृहरि से कहा। राजा भर्तृहरि अपनी पत्नी से बहुत प्रेम करता था। उसकी आयु अधिक हो यह सोचकर उसने वह फल उसे (अपनी पत्नी को) दे दिया। परन्तु उसकी पत्नी नगर के एक राज्य अधिकारी से प्रेम करती थी। उसने वह फल उसे (अपनी पत्नी को) दे दिया। उस राज्य अधिकारी का भी किसी दूसरी स्त्री से प्रेम था। उसने वह फल अपनी प्रियतमा को दे दिया। उस प्रियतमा का प्रेम भर्तृहरि से था। वह उस फल को फिर भर्तृहरि के पास लाई और कहा यदि आप इस फल को खाएँ तो आपकी आयु बहुत अधिक हो जाएगी। मैं आपकी लम्बी आयु चाहती हूँ। कृपया इस फल को आप खाएँ।

अपनी पत्नी को प्यार से भेंट किए हुए उस फल को किसी दूसरी स्त्री द्वारा लाया गया देखकर राजा भर्तृहरि जोर से हंसा, और उसने निम्नलिखित श्लोक पढ़ा-

जिस (अपनी प्रिय पत्नी) के बारे में मैं हमेशा सोचता रहता हूँ उसको मुझसे प्यार नहीं है। वह भी किसी दूसरे व्यक्ति को चाहती है और वह व्यक्ति किसी दूसरी स्त्री से प्यार करता है। इधर मुझे कोई और ही स्त्री प्रेम करती है। इसलिए धिक्कार है **ताम्**- मेरी पत्नी को, **तम्**- उस दूसरे पुरुष को, **मदनम्**- कामदेव को, इमाम् इसको (जो मुझे प्यार करती है), **माम् च**- और मुझे भी।

भर्तृहरि के हृदय में (इस घटना से) अत्यधिक वैराग्य पैदा हो गया। वह राज्य को छोड़कर वन में चला गया। उसके बाद वह वहीं वन में ही रहने लगा। उसने वैराग्य के बारे में सौ श्लोकों की रचना की। उनका संग्रह 'वैराग्य शतकम्' नामक काव्य में है।

18.7 1. अद्य अस्माभिः सा वाटिका द्रष्टव्या। 2. त्वया (युष्माभिः) एतानि पुस्तकानि पठितव्यानि। 3. तेन प्रातः दुग्धं पातव्यम्। 4. मया अनेन बालकेन सह नगरं गन्तव्यम्। 5. तेन तत् चित्रं स्वमित्राय दातव्यम्। 6. त्वया स्वभायां न स्वप्तव्यम्। 7. अस्माभिः अधुना आसनानि कर्तव्याणि। 8. छात्रैः कक्षायां कोलाहलः न कर्तव्यः।